International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

भारत में मानवाधिकार संरक्षण की आवश्यकता

Sumitra
Assistant Professor
Department of Sociology
C.R. College of Law, Rohtak (HR.)

शोध आलेख सार– वस्तुतः मानवाधिकार मानव जीवन की ऐसी परिस्थितियां हैं जिसके बिना किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का न तो विकास हो सकता है और न ही वह समाज के लिए उपयोगी बन सकता है। जिस समाज में मानवाधिकारों की स्थिति जितनी अधिक मजबूत होगी, वह समाज उतना ही अधिक प्रगतिशील माना जायेगा। अधिकांश समाज शास्त्री इस बात से सहमत हैं कि मानवाधिकार मानव सभ्यता का सार है और इनका सम्बन्ध मानवीय गरिमा से जुड़ा हुआ है। इसी को ध्यान में रखते हुए 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानवाधिकारों का घोषणापत्र लागू किया। तत्पश्चात सम्पूर्ण विश्व में 10 दिसम्बर को प्रत्येक वर्ष मानवाधिकार के रूप में मनाया जाता है। भारतीय संविधान भी सभी नागरिकों को मौलिक अधिकार प्रदान करता है और मानवाधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए 1993 में मानवाधिकार का गठन भी किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में भारतीय परिस्थितियों में मानवाधिकारों के संरक्षण पर प्रकाश डाला गया है।

मूलशब्द– मानवाधिकार, समाज, मानवीय गरिमा, मानवाधिकार आयोग, संयुक्त राष्ट्र संघ, मानवाधिकारों का घोषणा पत्र, मानवाधिकारों का संरक्षण।

भूमिका– आज विश्व में मानवाधिकारों का मुद्दा प्रमुख चर्चा का विषय बन चुका है। महिलाओं पर होने वाले अत्याचार, बाल–उत्पीड़न, युद्ध व हिंसा, आतंकवाद, नक्सलवाद, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, बलात्कार, यौन–उत्पीड़न आदि की बढ़ती समस्या ने हमें यह सोचने पर विवश किया है कि एक सभ्य समाज के नागरिक होने के नाते हम उन सभी

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

समस्याओं पर अंकुश लगाऐं जो मानवाधिकारों का हनन करती हैं और व्यक्ति की गरिमा को ठेस पहुंचाती हैं। चूंकि विश्व समाज में दास–व्यापार, मानव अंगों की तस्करी, श्रमिकों का शोषण, बाल मजदूरी, बंधुआ मजदूरी, आदि समस्याओं का प्रचलन लम्बे समय से अस्तित्व में रहा है, फिर भी मानव सभ्यता के विकास के साथ–साथ विश्व के लोकतंत्रीय देशों में इन पर काबू पाने के प्रयास भी किये गए हैं। मानवाधिकारों की अवधारणा जीओ और जीने दो के सिद्धान्त पर आधारित है और इसकी सुरक्षा के लिए आज व्यापक जन आन्दोलन चलाने तथा जन–जागृति लाने की महती आवश्यकता है ताकि विश्व का हर व्यक्ति सभ्य समाज में रहते हुए अपना गरिमापूर्ण जीवन जी सके और अपने व्यक्तित्व का विकास कर सके।

मानवाधिकार की अवधारणा– सामान्य रूप से मानवाधिकार की अवधारणा का सम्बन्ध किसी भी समाज में भेदभाव मूलक विचारों को त्याग कर सभी लोगों को समान विकास, संरक्षण व सम्मानपूर्वक जीवन जीने का अधिकार देने से है। हमारे संविधान में नीति निर्देशक सिद्धान्तों तथा मौलिक अधिकारों की व्यवस्था इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए की गई है। इसके लिए भारत में मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 द्वारा राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरों पर मानवाधिकार आयोग की स्थापना की गई है। यदि मानवाधिकार की अवधारणा की उत्पति के इतिहास का अवलोकन किया जाये तो इसकी शुरूआत मैग्नाकार्टा से मानी जाती है जो ग्रेट चार्टर के नाम से भी प्रसिद्ध है। इससे ब्रिटेन में राजा और प्रजा के बीच मानवाधिकारों की प्राप्ति का संघर्ष समाप्त हुआ और राजा द्वारा ब्रिटेन के नागरिकों को मौलिक स्वतंत्रता प्रदान की गई। इसके बाद 1776 में अमेरिका की क्रान्ति तथा 1789 में फ्रांस की क्रान्ति ने भी मानवाधिकारों के वजूद को

मजबूत किया। 1789 की फ्रांस की क्रान्ति का मुख्य नारा था– स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व।[1]

इसके बाद, धीरे–धीरे विश्व में मानवाधिकारों की स्थिति में सुधार आया और एक–एक करके सभी देश साम्राज्यवादी देशों के चंगुल से आजाद हो गये। चूंकि उपनिवेशवाद तथा साम्राज्यवाद की प्रक्रिया के अन्तर्गत समस्त विश्व में मानवाधिकारों के हनन में तेजी आई थी जो गुलाम देशों के आजाद होते ही सुधार के मार्ग पर चल पड़ी। प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान कई देशों में मानवाधिकारों का हनन चरम सीमा पर पहुंच गया था। जब विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद राष्ट्रसंघ की स्थापना हुई तो राष्ट्रसंघ की प्रसविंदा में राष्ट्रसंघ के उद्देश्यों व सिद्धान्तों के रूप में इस बात को शामिल किया गया कि विश्व में मानवाधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित हो और सभी देश इसमें भागीदार बनें। परन्तु धुरी शक्तियों ने अपने–अपने देशों में अल्पसंख्यक प्रजा पर अत्याचार जारी रखे। उदाहरण के लिए जर्मनी ने यहूदियों पर अत्याचार किये और उन्हें देश छोड़ने के लिए विवश किया। ऐसी स्थिति अन्य साम्राज्यवादी देशों में देखने को मिली।

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान भी विश्व में मानवाधिकारों का खुलकर हनन हुआ। इस समय जापान, जर्मनी तथा इटली ने अपनी विस्तारवादी नीति का अनुसरण करते हुए विश्व को युद्ध के कगार पर ला खड़ा किया और युद्ध के दौरान विश्व में मानवाधिकारों की स्थिति अत्याधिक खराब हो गई। इस दौरान संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के प्रयास तेज हुए और संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में इस बात को शामिल किया गया कि सभी देशों का यह परम कर्त्तव्य है कि वे अपने–अपने देशों में मानवाधिकारों का संरक्षण करें।

[1] जी.एल.शर्मा, सामाजिक मुद्दे, पृ0 361.

इसके लिए चार्टर में विशेष व्यवस्थाऐं भी की गई। बाद में 10 दिसम्बर 1948 को मानवाधिकारों की विश्व घोषणा का सूत्रपात हुआ।[2]

चूंकि मानवाधिकारों को लेकर कोई सर्वमान्य विश्वव्यापी परिभाषा नहीं दी जा सकती, परन्तु मानवाधिकारों को ही मूलाधिकार, आधारभूत अधिकार, मौलिक अधिकार, अन्तर्निहित अधिकार तथा नैसर्गिक अधिकार कहा जाता है। ये ऐसे अधिकार हैं जो मनुष्य को मानव होने के नाते जन्म से ही प्राप्त होते हैं। इन अधिकारों के लागू होने का तात्पर्य है कि सभी मनुष्य बराबर हैं चाहें उनका सम्बन्ध किसी जाति, धर्म, लिंग, वंश, देश आदि से हो। इनके बिना किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास असंभव है। मानव अधिकार एक ऐसी विस्तृत और गतिशील अवधारणा है जिसमें समयानुसार नये तथ्य शामिल होते रहते हैं। जैसे–जैसे मानव समाज समस्याओं से जूझता है और इन समस्याओं के कारण मानव के विकास पर प्रभाव पड़ता है तो उस परिस्थिति में राज्य व समाज का ये कर्त्तव्य बनता है कि वे मानवाधिकारों के मार्ग में उत्पन्न बाधाओं का निराकरण करे।

इस सत्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि मनुष्य जन्म तो स्वतंत्र रूप से लेता है लेकिन उस पर समाज द्वारा अनेक नियंत्रण स्थापित कर दिये जाते हैं और यहीं से उसके मानवाधिकारों के हनन की समस्या का जन्म होता है और जब मनुष्य मानवाधिकारों की समस्या से निजात पाने के प्रयास शुरू करता है तो एक आन्दोलन जन्म लेता है। अतः राज्य व सरकार का यह उत्तरदायित्व है कि वे मानव की स्वतंत्रता व समानता के अधिकार को सुरक्षित रखें।

मानवाधिकार को परिभाषित करते हुए आर.जे.बिसेन्ट ने लिखा है– ''मानवाधिकार वे अधिकार हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को मानव होने के नाते प्राप्त हैं और इनका आधार

[2] रामगोपाल शर्मा, मानवाधिकारों का भारतीय परिवेश, पृ0 9.

मानव स्वभाव से जुड़ा हुआ है।''[3] इसी तरह डेविस सेलवाई ने लिखा है कि मानवाधिकार संसार के समस्त व्यक्तियों को प्राप्त हैं क्योंकि वे स्वयं में मानवीय हैं। वे पैदा नहीं किये जा सकते, अतः वे खरीद या संविदावादी प्रक्रियाओं से मुक्त होते हैं।[4]

भारत में मानवाधिकार संरक्षण– भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान हमारे राष्ट्रवादी नेताओं तथा आम जनता को ब्रिटिश अत्याचार व दमन का सामना करना पड़ा था परन्तु मानवाधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए कई बार भारत में व्यापक विरोध प्रकट किये गए और व्यापक जन आन्दोलन भी चलाए गए। जब भारत को आजादी मिली तो हमारे संविधान निर्माताओं ने मानवाधिकारों के महत्व को समझते हुए इन्हें मौलिक अधिकारों के रूप में संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया। आज भारत मानवाधिकारों सबसे बड़ा समर्थक देश है तथा भारत में 1993 में मानवाधिकार आयोग का गठन किया गया है। इसे संवैधानिक दर्जा प्राप्त होने के कारण भारत में मानवाधिकारों के संरक्षण व संवर्धन की पृष्ठभूमि तैयार हुई है। मानवाधिकार अधिनियम 1993 की धारा–30 के अन्तर्गत मानवाधिकारों के हनन से जुड़े मामलों की शीघ्र जांच व न्याय दिलाने के लिए मानवाधिकार न्यायालयों के गठन की व्यवस्था भी इसके अन्तर्गत की गई है। 2006 में मानवाधिकार संरक्षण कानून में कुछ संशोधन भी किये गए और इसे जम्मू कश्मीर को छोड़कर समस्त देश में लागू कर दिया गया है।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 में कानून के समक्ष समानता, अनुच्छेद 15 में धर्म, वंश , जाति, आदि के अधार पर भेदभाव का निषेध, अनुच्छेद 16 में अवसर की समानता, अनुच्छेद 17 में अस्पृश्यता का अंत, अनुच्छेद 19 में वाक् एवं अभिव्यक्ति की आजादी, अनुच्छेद 20 में अपराधों के लिए दोष सिद्धि के सम्बन्ध में संरक्षण, अनुच्छेद 21

[3] अभय कुमार दुबे, सत्ता और समाज, पृ0 3
[4] रामगोपाल शर्मा, मानवाधिकारों का भारतीय परिवेश, पृ0 11.

में प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता, अनुच्छेद 23 में मानव के व्यापार व बलात श्रम का निषेध अनुच्छेद 24 में बालकों के कठोर श्रम पर रोक, अनुच्छेद 29 व 30 में धार्मिक स्वतंत्रता आदि व्यवस्थाएं करके सभी नागरिकों को मौलिक अधिकार दिये गए हैं और इनको संरक्षित करने के लिए अनुच्छेद 32 व 226 के अन्तर्गत संवैधानिक उपचार की व्यवस्था की गई है।[5]

इसके बावजूद कई मामलों में सरकार द्वारा बनाए गए कानून मानवाधिकार विरोधी सिद्ध हुए हैं और समाज द्वारा समय–समय पर इनका उल्लंघन किया जाता रहा है। इस बात से हम इंकार नहीं कर सकते कि भारत ने मानवाधिकारों को लागू करने के लिए अथक प्रयास किये हैं फिर भी बम्बई दंगे, गुजरात दंगे, गोधरा कांड, संसद पर हमला, नक्सली घटनाएं, आतंकवाद, महिलाओं के साथ बलात्कार व हत्याएं, निर्भया कांड, जेलों में कैदियों का उत्पीड़न, मेरठ दंगें, सहारनपुर हिंसा, आदि के कारण समय–समय पर देश में मानवाधिकारों के हनन की समस्या उत्पन्न हुई है। जन–जागरूकता के अभाव व गरीबी के कारण आज भी समाज के एक बड़े तबके का शोषण होता है और उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है। गैर सरकारी संगठनों तथा सामाजिक कार्यकत्ताओं द्वारा कई बार सरकार के संज्ञान में यह बात लाई जा चुकी है कि आज भी देश में भूख से मौतें होती हैं। इसमें मानवाधिकारों के हनन के सबसे अधिक मामले उतरप्रदेश में घटते हैं तथा इसके बाद राजधानी दिल्ली का स्थान है जो देश के लिए बड़ी शर्म की बात है।

हमारे देश में मानवाधिकारों के उल्लंघन के मामले में पुलिस सबसे बदनाम विभाग है। पुलिस की कार्यप्रणाली पर न्यायपालिका भी सवाल उठा चुकी है। पुलिस निरन्तर अपने अधिकारों का दुरूपयोग करने की दोषी पाई गई है। कई बार राष्ट्रीय महिला

[5] जी.एल.शर्मा, सामाजिक मुद्दे, पृ0 362.

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

आयोग तथा राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग द्वारा इस समस्या को उजागर भी किया जा चुका है। इसके बावजूद कानूनी प्रावधानों का उल्लंघन करके कैदियों को जेलों में क्षमता से अधिक रखा जाता है और अच्छा भोजन तक नहीं दिया जाता। एक कैदी होने के नाते भी उन्हें मिलने वाले अधिकार छीने जाते हैं। महिला कैदियों के साथ तो यौन उत्पीड़न की घटनाएं भी सामने आती हैं जो एक सभ्य समाज के लिए एक बड़ी शर्मनाक घटना है। 2012 में निर्भया कांड ने इस बात को सोचने पर विवश किया है कि हमारे समाज में आज भी महिलाओं की स्थिति संतोषजनक नहीं है। प्रतिदिन होने वाली रेप की घटनाएं व कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न की समस्या ने मानवाधिकारों की सुरक्षा पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है।

मानवाधिकारों का संरक्षण– आज इस बात की महती आवश्यकता है कि भारत जैसे देश में मानवाधिकारों के हनन की समस्या पर काबू पाया जाये ताकि हर भारतीय को भारतीय होने पर गर्व महसूस हो। इस दिशा में गैर–सरकारी संगठनों की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है। इसके साथ–साथ अल्पसंख्यकों पर होने वाले अत्याचारों पर अंकुश लगाना भी जरूरी है। यद्यपि भारत में इसके लिए भारत में अल्पसंख्यक आयोग का गठन किया गया है और दलितों पर होने वाले अत्याचार को रोकने के लिए मानवाधिकार आयोग अथक प्रयास करता रहा है फिर भी देश में मानवाधिकारों का हनन आम बात हो चुकी है। इस दिशा में निम्नलिखित संरक्षणात्मक उपाय अपेक्षित हैं–

1. मानवाधिकारों की शिक्षा को स्कूल स्तर पर ही पाठ्यक्रम का हिस्सा बना दिया जाये।
2. मानवाधिकारों को लेकर जन–जागरूकता अभियान चलाये जायें।
3. मानवाधिकारों की दिशा में गैर–सरकारी संगठनों की भूमिका की पहचान की जाये।
4. सरकारी तथा गैर–सरकारी संस्थानों में समय–समय पर मानवाधिकारों के बारे में सेमिनार व गोष्ठियां आयोजित किये जायें।

5. मानवाधिकारों से सम्बन्धित सभी संवैधानिक व्यवस्थाओं का संरक्षण सुनिश्चित किया जाये।
6. मानवाधिकारों के हनन से पीड़ित व्यक्ति को पर्याप्त कानूनी व आर्थिक सहायता उपलब्ध करवाई जाये।
7. मानवाधिकार आयोग को अधिक न्यायिक व दण्डात्मक शक्तियां प्रदान की जायें तथा इसको महिला आयोग तथा अल्पसंख्यक आयोग के साथ जोड़कर भावी रणनीति तैयार करने की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए।
8. मानवाधिकारों की हनन की शिकायतों का समय पर निपटारा हो।

सारांश– इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आज विश्व में मानवाधिकारों के हनन का मुद्दा एक ज्वलंत समस्या के रूप में उजागर हुआ है। यदि भारत के सन्दर्भ में देखा जाये तो मानवाधिकारों का सर्वाधिक हनन पुलिस विभाग में होता है तथा जेलों में कैदियों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है। आये दिन महिलाओं के साथ होने वाले बलात्कार तथा यौन उत्पीड़न की घटनाएं हमारे सभ्य समाज पर करारा तमाचा लगाती हैं। सरकार के दावे भी खोखले साबित हो रहे हैं कि अपराधियों को किसी भी कीमत पर बख्शा नहीं जायेगा और कठोर सजा दी जायेगी। उतरप्रदेश तो मानवाधिकारों के हनन को लेकर काफी बदनाम है तथा दिल्ली भी इस दिशा में पीछे नहीं हैं। प्रतिदिन बच्चियों के साथ होने वाले बलात्कार, हमें सोचने पर विवश करते हैं कि क्या हम 21वीं सदी में रह रहे हैं? अतः इस दिशा में जन–जागरूकता अभियान चलाने की आवश्यकता है और मानवाधिकारों के संरक्षण को लेकर अधिक प्रभावी कानून बनाने व लागू करने को भी हमने प्राथमिकता देनी चाहिए ताकि भारत में मानवाधिकारों के हनन की समस्या समाप्त हो सके।

सन्दर्भ सूची–

1. डी.गिल, **वायलेंस अगेंस्ट चिल्ड्रन**, हावर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1970.
2. ई.बी. लियोनार्ड, **वूमेन, क्राईम एण्ड सोसायटी, ओरियण्ट लोंगमैंन**, न्यूयार्क, 1982.
3. राम आहूजा, **क्राईम अंगेंस्ट वूमेंनं,** रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 1987.
4. मुकुल श्रीवास्तव, **मानवाधिकार और मीडिया**, अटलांटिक पब्लिशर्स, दिल्ली, 2007.
5. महेन्द्र मिश्रा, **भारत में मानवाधिकार,** आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली, 2008.
6. रामगोपाल शर्मा, **मानवाधिकारों का भारतीय परिवेश**, किताब घर प्रकाशन, दिल्ली, 2009.
7. अभय कुमार दुबे, **सत्ता और समाज,** वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009.
8. राम आहूजा, **सामाजिक समस्याएं,** रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011.
9. जी.एल.शर्मा, **सामाजिक मुद्दे**, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2015.